अनुबोधन, खण्ड 1, अंक 4, दिसम्बर 2025, पृष्ठ 112–116
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट), 3108-1185 (ऑनलाइन)
प्रकाशित: 31 दिसम्बर 2025
जर्नल वेबसाइट: **https://anubodhan.org**
DOI: 10.65885/anubodhan.v1n4.2025.036

सूर्यपुत्र रेवंत प्रतिमा एवं योद्धा प्रतिमा का तुलनात्मक अध्ययन (दुर्ग संभाग के सन्दर्भ में)

डॉ. प्रशांत कुमार चौरे*

छत्तीसगढ़ अंचल में अश्व पर आरुढ़ योद्धाओं का अंकन प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। इस प्रकार की प्रतिमाएँ मंदिर वास्तु से लेकर गाँवों के शीतला मंदिर अथवा अन्य देव स्थलों में प्राप्त हो जाती है। जहाँ इन्हे पूर्वज या ग्राम की रक्षा करने वाले संतरी देवता के रुप में पूजा जाता है। शिल्पांकन की दृष्टि से इस कला धारा में शिल्प शास्त्र का अनुकरण नही किया जाता है बल्कि यह उकेरी कला के माध्यम से निर्मित किया जाता था। अश्वारोही के चित्रांकन में उस क्षेत्र के सामंत, प्रशासक, दण्डनायक या किसी विशिष्ट व्यक्ति को दर्शित किया जाता था। अर्थात राजसी ठाठ-बाठ के साथ अश्व का आरोहण केवल विशिष्ट व्यक्ति ही कर पानें में समर्थवान था या युद्धादि कार्य के लिए राज्य के विशिष्ट जन या सैनिक अश्व का उपयोग कर पाते थे। अश्वारोही प्रस्तर फलक के निर्माण का उद्देश्य या प्रयोजन हम मुख्य 4 बिंदुओं के माध्यम से ज्ञात कर सकतें है –

1. किसी युद्ध में भाग लेने के लिए जाते हुए योद्धा या सैनिक ।

2. नगर भ्रमण या विशेष जुलुस के लिए जाते हुए राजा या विशिष्ट व्यक्ति।

3. विवाह संस्कार में वर के रुप में सुसज्जित अश्व पर आरुढ़ वर या दूल्हा जो विवाह संस्कार में या तो सम्मिलित होने जा रहा है या तो कन्या पक्ष के घर ब्याहने जा रहा है।

---

*प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति और पुरातत्व विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छत्तीसगढ)
E-mail: prashantchaore183@gmail.com

4. युद्ध में प्राणोत्सर्ग करने वाले योद्धा। वस्तुतः इन स्मारक प्रस्तरों के शीर्श भाग पर सूर्य और चंद्र का अंकन प्राप्त होता है।

किन्तु "अश्वारूढ़ योद्धा प्रस्तर के समानांतर एक अन्य प्रकार की प्रतिमा की प्राप्ति भी होती है। जिसकी समता सीता राम शर्मा 'सूर्य पुत्र रेवंत' से करते हुए अपगत कराते हैं कि के सूर्य पुत्र रेवंत की प्रतिमा में केवल अंतर प्रतिमा के ऊपरी भाग में अंकित सूर्य और चन्द्र से है होती है। रेवंत प्रतिमा में सूर्य और चंद्र का अंकन दृष्टव्य नही होती है। प्रसिद्ध विद्वान बनर्जी भी रेवंत प्रतिमा से संबधित तथ्यों का परिचय कराते हैं|"[1] सूर्य पुत्र रेवंत की प्रतिमा मुख्य दो रूपों में प्राप्त होती है, प्रथम रूप में वे अश्व पर आरूढ़ होकर आखेटक स्वांग में रहते है।

यथा - रेवंतो अखारुढ़ो मृग्या क्रीड़ादि परिवारः ।।[2]

मार्कण्डेय पुराण में रेवंत तथा उनके विविध आयुधों का उल्लेख प्राप्त होता है |

रेवंतः खड्गी चर्मी तनुत्रधृक।

अश्वारुढ़ो समुद्भूतो वाण तूण समन्तिः ।।

तथा उनके साथ अन्य आखेटक उनका अमुगमन करते है। "द्वितीय रूप में वे आखेट पश्चात् निगमन करते हुए अंकित किए जाते है, अर्थात आखेट की समाप्ति पश्चात् अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान करते हुए प्रदर्शित रहते हैं|"[3] ऐसी प्रतिमाएँ अनेक स्थलों से प्राप्त हुई जिनमें गातापार जंगल, पाँडादाह, मेसोदास खजरी खैरागढ, मुढ़ीपार, ढारा, डोंगरगढ़, छुरिया उल्लेखनीय है। "विष्णु पुराण के अनुसार सूर्य तथा उनकी पत्नी संज्ञा जो उस समय घोड़ी के रूप में थी, के सहवास के पश्चात् नथुनों से रेवंत की उत्पत्ति मानी गई है। रेवंत जन्म से ही खड्ग, कवच, धनुष धारण करते हुए अश्व पर विराजमान बताये जाते हैं। अनेक पुराणों में इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है कि, सूर्य के द्वारा रेवंत को भयहर्ता, गुह्यों के प्रति मित्र तथा शत्रुओं से रक्षा करने वाले देव के रूप में पूजनीय होने का वरदान प्राप्त था|"[4] "भगवान शिव का कथन है कि, रेवंत की पूजा करने के पश्चात् उनके दर्शन से अनिष्ट का शमन होता है|"[5]

वृहत् संहिता में रेवंत प्रतिमा निर्माण पद्धति का स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि "रेवंत को अश्व पर विराजमान मृगया अर्थात आखेट के लिए उद्यत, अपने अनुचरों से घिरा हुआ अंकन किया जाना चाहिए|"[6] हिमाद्रिकृत चतुर्वर्ग - चिंतामणी, वात खण्ड में वर्णन प्राप्त होता है कि सूर्य पुत्र रेवंत अश्वारोही रूप में वन देवता हैं। वे समस्त वनों के रक्षक तथा अधिष्ठाता हैं। जो अपने अनुचरों के साथ वनों में आखेट करते हुए विचरण करते हैं।

रेवंत प्रतिमा की विशेषताएँ

सूर्य पुत्र रेवंत की प्रतिमा भारत के विभिन्न स्थलों से प्राप्त हुई है। राजस्थान के नगर चित्तौर से प्राप्त प्रतिमाएँ सबसे प्राचीन मानी जाती है। जो संभवतः पाँचवीं या छठी शता ई. में निर्मित है। इसके अलावा नेवाल उत्तर प्रदेश, भागलपुर, गया बिहार इत्यादि स्थलों से भी उपरोक्त काल की रेवंत प्रतिमाएँ प्राप्त हुई है।

5वीं-6वीं शता.उपरांत पूर्व मध्यकाल में भी भारत के अनेक स्थलों यथा - बंगाल, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, गुजरात में इसी प्रकार की प्रतिमाएँ प्राप्त होती है। जो कदाचित् सूर्य पुत्र रेवंत की मानी जाती है।

साक्ष्य स्वरूप राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली मे रेवंत प्रतिमा संग्रहित है। जिनका वाहन अश्व है। वे मृगया भाव में एक हाथ में प्याली तथा दूसरे में अश्व की लगाम या रास पकड़े हुए हैं। तथा अपने दोनों अनुचरों पींगल एवं दण्ड के साथ गतिशील है। रेवंत प्रतिमाओं की मुख्य विशेषता यही है कि, प्रस्तर के शिरोभाग में आकाशाचारी देवताओं के साथ ही गणेश, कार्तिकेय तथा सूर्य का अंकन भी प्राप्त होता है। इनकी प्रतिमाओं को गुप्तकालीन कला में भी समाविष्ट किया गया है। विविध गुप्तकालीन मंदिरों के अधिष्ठान अथवा विथिकाओं में यह कला देखी जा सकती है।

"खजुराहों की देव प्रतिमाएँ नामक पुस्तक में रामाश्रयी अवस्थी, द्वारा प्रभावी वर्णन किया गया है|"[7] प्रतिहार कला प्रतिमानों से लेकर डाहल की कलचूरियों के द्वारा भी अपने समकालीन कला शिल्प में अश्वारूढ़ प्रतिमाओं को अन्य प्रतिमाओं के साथ उकेरा गया है।

"कलचूरि कला के अंतर्गत शहडोल जिले के सोहागपुर से प्राप्त रेवंत की प्रतिमा को अद्वितीय स्थान प्राप्त है|"[8] ऊपरांकित योद्धा स्मारक प्रतिमाएँ तथा सूर्य पुत्र रेवंत की प्रतिमाओं का साक्ष्य सम्मत विवेचन करने पश्चात्

यह स्पष्ट हो जाता है कि- अश्वारूढ़ योद्धा प्रतिमाएँ सूर्य पुत्र रेवंत की प्रतिमाओं का संभवतः अनुकरण है।

रेवंत की प्राचीनतम प्रतिमा का निर्माण काल ईसा की 5वीं 6वीं शता. माना जाता है। अर्थात रेवंत उप देव के रूप में प्राचीन काल से ही पूजे जाते थे। जबकि स्मारक का स्वरूप प्राचीन काल में एक मात्र प्रतीक रूप में ही प्राप्त है। योद्धा स्मारक प्रतिमाओं का निर्माण काल छत्तीसगढ़ में हम 10वीं -12वीं शताब्दी से लेकर संभवत 17वीं शता. तक ही पाते है। रेवंत की प्रतिमाएँ शिल्पशास्त्र अंतर्गत् उत्कीर्ण किया गया है। वहीं योद्धा स्मारक स्तंभ या प्रतीक स्वरूप का निर्माण उक्त व्यक्ति विशेष द्वारा किए गए उस कार्य को अक्षुण्य बनाए रखने के लिए किया जाता था जिस कार्य में जन मानस के लिए मंगलाचार की भावना होती थी। इन स्मारक प्रतिमाओं को स्वतंत्र कला या क्षेत्रीय कला का सुन्दर उदाहरण माना जा सकता है। शिल्पियों की छेनी शास्त्र विहिन स्वतंत्र रूप से इसमें चलाई गई है।

किन्तु निष्कर्षतः दोनों प्रतिमाओं का भाव लगभग समान है। रेवन्त प्रतिमा की पूजा शत्रुओं से रक्षा निमित्त की जाती थी और योद्धा स्मारक प्रतिमा की पूजा देव के बाद वीर पूजा के परिप्रेक्ष्य में की जाती थी ।

योद्धा स्मारक प्रतिमाओं को वर्तमान में वन देवता या संतरी देवता के रूप में वनांचलों के आदिवासी बड़ी ही श्रध्दा से पूजते हैं तथा उनके लिए विशेष पर्व में अनुष्ठानिक क्रियाएँ भी करते हैं।

इस प्रकार अश्वासीन योद्धा स्मारक प्रतिमाएँ शिल्प कला की दृष्टि से द्वितीय श्रेणी की मूर्तिकला से संबंध रखती है। जिससे क्षेत्रीयता तथा स्थानीय कला का बोध स्पष्टतया दृष्टि गोचर होता है।

संदर्भ:

1 इस्टर्न इण्डियन स्कूल ऑफ मेडिवल स्कल्पचर, पृष्ठ क्र. -123

2 वृहत्त संहिता, अध्याय- 57

3 मारकण्डेय पुराण, अध्याय - 78 पृ. 221

4 शर्मा, सीता राम, भोरमदेव क्षेत्र की कला, पृष्ठ क्र. 148

5 स्कंद पुराण 1/4 प्रभास खण्ड 1/2, 164/1/4

6 वृहत्त संहिता- 58/56

7 अवस्थी, रामाश्रयी, खजुराहो की देव प्रतिमाएँ पृष्ठ-182

8 आर.डी. बनर्जी, द हैहयाज ऑफ त्रिपुरी एण्ड देयर मानुमेंट्स, पृष्ठ -106

9 चौरे, प्रशांत कुमार, शोध प्रबंध - छ .ग. की स्मारक प्रतिमाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन (दुर्गा संभाग) 2023, पृष्ठ क्र. 101, 102, 103

10 पूर्वोक्त - 104, 105, 106, 107

Copyright © 2025 Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).